वन अधिकार और कोविड 19

आदिवासियों और जंगल निवासी समुदायों पर कोविड19 और लॉकडाउन का असर

इस अंक में

ज़मीन से उठती आवाज़ें

त्रिलोकी देवी
उधम सिंह नगर, उत्तराखंड

रजांती मलिक
कंधमाल, ओडिशा

मनिया धुर्वे और मयकालीबाई
मांडला, मध्य प्रदेश

सहवनिया
लखीमपुर खीरी, उत्तर प्रदेश

गौतो बाई
राजनांदगांव, छत्तीसगढ़

दमा देवी
मंडी, हिमाचल प्रदेश

जन्हा प्रधान
नयागढ़, ओडिशा

प्रस्तावना

कोविड19 और वन अधिकार बुलेटिन का तीसरा अंक आदिवासी और जंगल निवासी समुदायों के ऊपर कोविड19 के असर के व्यापक संदर्भ में **औरतों की आवाज़ों** पर केंद्रित है।

सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों और प्रचलनों ने परंपरागत रूप से सामुदायिक निर्णय प्रक्रिया में औरतों को भाग लेने से रोका है और उन्हें औपचारिक और प्रथागत कानूनों के तहत समान विरासत और संपत्ति अधिकारों से वंचित रखा जाता रहा है। वन अधिकार कानून, 2006 ऐसे चंद प्रगतिशील कानूनों में एक है जो वन अधिकारों को मान्यता देने के मामले में इस ऐतिहासिक नाइंसाफी को खत्मकर लैंगिक समानता को मुख्यधारा में शामिल करने की कोशिश करता है।

यह बुलेटिन आदिवासी और विशेष रूप से असुरक्षित आदिवासी समूहों (पीवीटीजी), पारंपरिक जंगल निवासी और चरवाहा समुदायों की जिंदगी और आजीविका पर लॉकडाउन के असर के बारे में औरतों के बयानों को सामने लाता है। इनमें से कई औरतें जंगलों में रहती हैं, जहाँ उन्हें पट्टे की सुरक्षा हासिल है, कई उत्पीड़न और बेदखली के खिलाफ लड़ रही हैं और कई अपनी दास्तान सुनाने के लिए जिंदा नहीं रह पाईं। कई संरक्षित क्षेत्रों में रहती हैं, जबकि कई शहरों में मजदूरी करती हैं। कई के ऊपर अपने पूरे परिवार के भरण-पोषण का जिम्मा है, जबकि कई अकेली औरतें हैं जो अपनी जिंदगी के लिए लड़ रही हैं। उम्मीद है आप इनके मार्फत लघु वनोपज सहकारी समितियों के सदस्य, अपनी ग्राम सभाओं और वन संरक्षा समितियों के नेता के रूप में औरतों के संघर्षों और उम्मीदों के अनुभवों को समझ सकेंगे।

औरतों के जीवन के हर क्षेत्र में लॉकडाउन के कई विशिष्ट असर हुए हैं : खाद्य असुरक्षा और पोषण संबंधी मुद्दे, आवाजाही पर पाबंदी, बाजार के कमजोर होने, आबोहवा में बदलाव, जंगलों का अन्य इस्तेमाल और औरतों की देख-रेख में जमीन के टुकड़ों, जिनपर वे आश्रित हैं, उनपर वनीकरण, लिंग-आधारित हिंसा, लघु वनोपजों के संग्रह और बिक्री में कमी और समुचित आजीविका के विकल्पों के अभाव में प्रवासी महिला मजदूरों की बँधुआ मजदूरी। उन ग्राम सभाओं में, जहाँ औरतों को बराबरी का हक हासिल है, जहाँ वे बराबर की भागीदार या नेता हैं, वहाँ इन दास्तानों से स्पष्ट है कि जंगल निवासी समुदायों को ज्यादा सुरक्षा, संप्रभुता और स्वास्थ्य सुविधाएँ हासिल हैं और माहौल ज्यादा अच्छा है।

इस बुलेटिन को अदिति और संघमित्रा ने तैयार किया है। इसमें उन्हें मधु, तुषार, अर्चना और सुष्मिता का सहयोग मिला है। संध्या और अनिरुद्ध ने इसका डिजाइन किया है और इसका हिंदी अनुवाद ध्रुव ने किया है। दास्तानों का श्रेय हीरा, मकाम (उत्तराखंड), सृष्टि (छत्तीसगढ़), ध्वनि और शिवांगी (मध्य प्रदेश), मारग (गुजरात) और पास्टोरल विमन एलांयस को जाता है।

नीचे: कैंपा वनीकरण से अपने जंगल को बचाने के लिए जमा औरतें

पिछला पृष्ठ: कंधमाल जिला की औरतें वन विभाग से अपने कुदरती जंगली पेड़ों की रक्षा करती हुईं।

त्रिलोकी देवी की कहानी

उत्तराखंड की एक वनराजी आदिम अनुसूचित जनजाति महिला

मैं **त्रिलोकी देवी**, 65 साल की, वनराजी बस्ती गांव में रहने वाली वनराजी आदिम अनुसूचित जनजाति की महिला हूँ। वनराजी बस्ती (ब्लॉक खटीमा, जिला उधम सिंह नगर) जो नेपाल का बोडर में एक छोटा सा गांव है। गांव में 40 परिवार निवास करते हैं जिसमें 15 परिवार वनराजी हैं बाकी अन्य परंपरागत लोग निवास करते हैं। इस क्षेत्र में हम वनग्राम समुदाय जंगलों पर ही अपनी आजीविका के लिए आश्रित है। मुख्यतः लकड़ी,घास,चारा,जड़ी-बूटी,कन्ध मूल,मछली आदि पर निर्भर हैं। लॉक डाउन के दौरान हो या और समय कन्ध मूल फल, जिबुरा,लिंगुड़ा, परमल , कोचू मछली, जंगली पक्षी की सब्जी ही बनती है। हम होटलों में सुखी जलौनी लकड़ी का व्यवसाय करते थे जो बन्द है। हवा तूफान से कच्चे घर टूट गए है जिससे हम लोगो को बहुत दिक्कत हुई है।

ऊपर: त्रिलोकी देवी

हम लॉक डाउन से ज्यादा संकट में हैं। मेरे पास ज़मीन बहुत कम है व भी वन विभाग हमेशा धमकाते है। दावा पत्र भरने के बाद भी ये हाल है। सरकार ने अभी तक पट्टा नही दिया है। मेरे बेटे के साथ दारू पिलाकर वन विभाग के लोगो ने मार-पीट किया और जब मैंने आवाज़ उठाया तो वन विभाग ने गांव से निकालने की धमकी दी। हम रिपोर्ट भी नहीं कर सकते हमारी कोई नहीं सुनते है। लॉक-डाउन के वजह से मजदूरी नहीं कर सकती हूँ। मेरे पास जॉब कार्ड नहीं है ,श्रम विभाग में रजिस्ट्रेशन नहीं है ,जन-धन योजना का खाता नहीं है। बीमार रहती हूँ लेकिन अपना इलाज नहीं करा पा रही हूँ।

त्रिलोकी देवी की प्रमुख मांग- सरकार से हमारी मांग है कि हमको वन अधिकार कानून के तहत मिलने वाले पूर्ण अधिकार दिये जाए। जिसमे हम वनराजी समुदाय को सामूहिक और व्यक्तिगत दावा में मालिकाना हक मिले व वनराजी जनजाति समाज को भी समाज की मुख्य धारा से जोड़ा जाए। लॉक डाउन के दौरान भी हमारे साथ तरह तरह की हिंसा होती है। सरकार अन्य गांव में राशन देता है। हम आदिम जनजाति को क्यों नहीं मिला है?।

ऊपर: कंधमाल, ओडिशा में अपने जंगलों को कैंपा वनीकरण से बचाती औरतें

ओडिशा में कैंपा वनीकरण का विरोध करनेवाले एक महिला समूह और **रजांती मलिक की दास्तान**

मेरा नाम **रजांती मलिक** है। मैं ओडिशा के कंधमाल जिला के दरिंगबा-दी ब्लॉक के पिडोरमहा गाँव में रहती हूँ। **इस लॉकडाउन के दौरान जब हमें घर में ही रहने की सलाह दी गई, उसी समय वन विभाग ने हमारे कुदरती जंगलों को तहस-नहस कर दिया और काट डाला।** वे आए और बसे-बसाए जंगल को साफ कर दिया। हम अपने भोजन और आजीविका के लिए उन्हीं पर आश्रित थे। हम हर साल नए पेड़ लगाते थे। उस दिन 28 मई को हमारे महिला समूह ने जंगल के ईर्द-गिर्द घेरा डाल दिया और अपना विरोध जताने लगे।

कोरोना वायरस लॉकडाउन के कारण हम अपने सैली और साल पत्तियों और प्लेटों, तेंदू और बहाडा को बेच नहीं पाए और ये सब बरबाद होने लगे हैं। हम असहाय महसूस कर रहे हैं और यह समझ नहीं पा रहे हैं कि अपने बाल-बच्चों का भरण-पोषण कैसे करें। इस संकट में, लॉकडाउन की पाबंदियों और वन विभाग की ज्यादतियों के बीच हम अपने को असहाय पा रहे हैं। हम जिंदा कैसे रहें?

मध्य प्रदेश की भूमिहीन गोंड आदिवासी औरतें
मनिया धुर्वे और मयकालीबाई की जिंदगी में **लघु वनोपज का महत्त्व**

प्रचलित श्रम विभाजन के लिहाज से जंगलों से संसाधनों को इकट्ठा करने का काम सामाजिक रूप से औरतों के जिम्मे होता है। इसलिए, जब असुरक्षित जंगल आश्रित समुदायों के लिए, खासकर औरतों के लिए वन उत्पादों को इकट्ठा करने की गुंजाइश नहीं होती तो उससे उनके जीवन में व्यवधान आता है।

मनिया धुर्वे एक भूमिहीन गोंड आदिवासी है जो अपने पति और दो शिशुओं के साथ मध्य प्रदेश के मांडला जिला के बिछिया ब्लॉक के गुबरी गाँव में रहती है। उसके परिवार ने जमीन के एक छोटे-से टुकड़े को (लगभग आधा एकड़) धान उगाने के लिए पट्टे पर लिया है। उसे सार्वजनिक राशन की दुकान से चावल मिलता है लेकिन मनिया का नाम राशन कार्ड में दर्ज नहीं है। नतीजतन, चार लोगों के लिए खाना पूरा नहीं पड़ता। **ऐसे में, गैर-इमारती वन उत्पाद (एनटीएफपी) तक पहुँच परिवार को संकट से पार पाने में मदद करती रही है।**अप्रैल के महीने में मनिया और अशोक ने 15-20 किलो महुआ इकट्ठा किया जिसे उन्होंने लगभग 25-30 रुपए की दर पर बेचा। चूँकि बाजार बंद था इसलिए व्यापारी गाँव-गाँव जाकर संग्रहकर्ताओं से महुआ खरीदते थे। मनियाबाई कहती है कि अगर वे बाजार जाकर उसे बेचते तो शायद वे थोड़ी ऊँची दर पर बेच पाते लेकिन अहम बात थी कि वे समय पर उसे बेच पाएँ। मनिया कहती है, **"अगर महुआ के फूल नहीं होते तो लॉकडाउन के दौरान हमें और हमारे बच्चों को खाना मिलना मुश्किल हो जाता"।**

मयकाली बाई 50 साल की बुजुर्ग महिला है जो कान्हा नेशनल पार्क के बफर के भीमपुरी गाँव में रहती है। जमीन के किसी टुकड़े पर स्वामित्व का

नीचे: महुआ के फूल

अधिकार नहीं होने से उसे अपने देवर की जमीन से उपज का एक छोटा-सा हिस्सा मिलता है। ऐसे में वह दिहाड़ी मजदूरी से होनेवाली आय से गुजर-बसर करती है। कोविड-19 के लॉकडाउन के कारण इस साल वह लगभग 300 बंडल तेंदू पत्ता ही जमा कर पाई और बेच पाई जिससे उसे कुल 750 रुपए मिले। वह सुबह 4 बजे उठ कर पत्ता जमा करने निकल पड़ती है और दोपहर तक ही वापस आ पाती है। जल्दी-जल्दी खाना खाकर वह पत्तों का बंडल बाँधने में लग जाती है और 3 बजे फाड़ (वह जगह जहाँ पत्ते बेचे जाते थे) के लिए चल पड़ती है। इस मामले में फाड़ गाँव से 5 किलोमीटर की दूरी पर है। मयकाली बाई गाँव की कई और औरतों के साथ पैदल फाड़ तक जाती जाती है और पत्ते बेचकर अँधेरा होने पर ही वापस आ पाती है।

वह कहती है कि इस साल वन विभाग ने महुआ संग्रह के मौसम में कई सावधानियाँ बरतने की चेतावनी जारी की है। लोगों के ऊपर बाघों के हमलों और हाथियों के आवागमन के चलते वन विभाग बफर के गाँवों में कई सावधानियाँ बरतने की चेतावनी दी है और लोगों को चेताया है कि वे सुबह जल्दी या शाम को देर से महुआ जमा करने जंगल में न जाएँ। मयकाली बाई कहती है कि उसके महुआ के पेड़ जंगल के अंदर हैं और उसे फूल जमा करने सुबह जल्दी जाना पड़ता है क्योंकि फूल रात में ही पेड़ से झड़ते हैं। लगातार चेतावनी जारी करने से वह कई दिनों तक फूल जमा करने नहीं जा पाई। इस मौका को खोने की कीमत काफी बड़ी थी। अगर ये पाबंदियाँ नहीं होतीं तो वह 8-10 किलो ज्यादा फूल जमा कर पाती। **कई मर्तबा अप्रत्याशित मौसम के कारण भी पाबंदियाँ आ जाती हैं। मिसाल के लिए, इस साल लॉकडाउन और महामारी के तनावों के साथ-साथ आबोहवा में बदलाव के कारण जंगल निवासियों को संसाधन संग्रह की अनिश्चितता का तनाव भी झेलना पड़ा। यह खास तौर पर तेंदू पत्ता और महुआ के फूलों के संग्रह के मामले में स्पष्ट था।**

ऊपर: मयकाली बाई

गुजरात के गड़ेरिया **मालधारी औरतों** की परेशानियाँ

कोविड-19 ने मालधारियों के प्रवास के ढर्रे को भी प्रभावित किया है। उनके आवागमन पर लगी दीर्घ-कालीन पाबंदी की वजह से उन्हें नए रास्ते अपनाने पड़े। साथ ही इसकी दूसरी वजह यह थी कि किसान और गाँववासी कोरोना वायरस के प्रसार के भय से डरते थे, नहीं तो पहले वे उन्हें अपने खेतों में ठहरने के लिए आमंत्रित करते थे। कई जगहों पर माल-धारियों के गाँव में प्रवेश पर पूरी तरह रोक थी और कई बार उन्हें कड़वी बातें सुननी पड़तीं या छोटे-मोटे झगड़ों को झेलना पड़ता।

यह सभी के लिए असहजता का कारण था। इसका सबसे बुरा असर औरतों पर पड़ा क्योंकि वे ही गाँववालों के साथ पानी, राशन, दूध की बिक्री आदि का सौदा करती थीं। नई जगहों पर यह कर्तव्य निभाना उनके लिए थोड़ा मुश्किल था। वे अनिश्चय, असहजता से भरी रहती थीं और अक्सर असुरक्षित महसूस करती थीं। गाँववाले मालधारियों को गाँव से पानी लेने से भी रोकते थे। चूँकि यह सब औरतों के जिम्मे होता था, वे घर-बार और मवेशियों की जरूरतों के लिए पानी लाने से कतराती थीं।

मालधारी अपना दूध डेयरी कोऑपरेटिव और निजी ठेकेदारों को बेचते थे, लेकिन नए रास्तों में वे डेयरियों और निजी ठेकेदारों से अपरिचित थे। ऐसे में दूध बेचने का बोझ औरतों पर आ पड़ा। देखा गया कि कई मामलों में उन्हें दूध और दुग्ध उत्पाद काफी सस्ते में बेचने पड़े। मिसाल के तौर पर, दूध के लिए पहले जहाँ उन्हें प्रति लीटर 40 रुपए मिलते थे, अब लॉकडाउन के दौरान 22 रुपए प्रति लीटर की दर से अपना दूध बेचना पड़ा। इसने मालधारियों को आर्थिक और सामाजिक, दोनों रूप से तोड़ दिया। मवेशियों की खरीद-बिक्री भी पूरी तरह बंद हो गई, लॉकडाउन में मवेशियों के दाम बढ़ गए और गर्मी के महीनों में भेड़ों का ऊन उतारने-जैसे कामों में किसी की मदद मिलना असंभव हो गया। इससे उनकी आर्थिक तंगी और बढ़ गई।

औरतें इस वित्तीय नुकसान से सबसे ज्यादा प्रभावित हुईं, क्योंकि प्रवास के दौरान वित्तीय संसाधनों के प्रबंधन की जिम्मेदारी मालधारी औरतों की होती है। चूँकि वे अपने मूल गाँव से दूर थीं, उन्हें सार्वजनिक राशन की दुकान से राशन मिलना बंद हो गया था। पहले के सालों में वे काम चला लेते थे, लेकिन अब आय के नुकसान के एक भारी वित्तीय संकट का सामना करना पड़ा। कच्छ की एक औरत का कहना था कि “हमें एक जून के खाने के लिए 20 चपातियाँ लगती हैं पर आजकल हमें 10 चपातियों से काम चलाना पड़ रहा है। हम ऐसा इसलिए करते हैं कि राशन लंबे समय तक चलता रहे।” इसका सबसे भारी असर समूह की औरतों पर पड़ा है। कुछ समूहों का कहना था कि उन्हें खाने का सामान ऊँचे दर पर खरीदना पड़ता है और इसके लिए भी औरतों को लंबी दूरी तय करनी पड़ती है। ऐसे में उनकी मेहनत और तनाव का स्तर बढ़ गया है।

नीचे: मक्खन और दही बनाती मालधारी औरतें

दुधवा नेशनल पार्क, उत्तर प्रदेश के **थारू आदिवासी महिला मजदूर किसान मंच** की दास्तान **सहवनिया** की जुबानी

मैं सुरमा गाँव की रहनेवाली **सहवनिया** हूँ और थारू आदिवासी महिला मजदूर किसान मंच का हिस्सा हूँ। हमारा संगठन पुश्तों से लड़ाई लड़ रहा है : पहले दुधवा नेशनल पार्क के अंदरूनी हिस्से से दो गाँवों को हटाए जाने के खिलाफ, फिर राजस्व की स्थिति और अब सामुदायिक वन अधिकारों के लिए, जिन्हें मान्यता देने में लॉकडाउन के कारण और देरी की हो रही है।

जब से लॉकडाउन की घोषणा हुई है, लोग जंगल नहीं जा पा रहे हैं क्योंकि फॉरेस्ट गार्ड उन्हें तंग कर रहे हैं और जो लोग जलावन इकट्ठा करने जाते हैं उनसे मनमाना पैसा वसूल रहे हैं। इसके अलावा संरक्षित क्षेत्रों से संबंधित छह अप्रैल के आदेश के बाद फॉरेस्ट गार्ड लोगों को जंगल में नहीं जाने दे रहे हैं। कहते हैं कि मनुष्यों से जानवरों में संक्रमण फैलने का खतरा है। चूँकि लोग गाँव के पड़ोस में स्थित जमीन के टुकड़ों पर खाद्यान्नों की उपज, मुख्य तौर पर गेहूँ और साग-सब्जी की पैदावार पर जिंदा रहते हैं, इसलिए जंगल में नहीं जा पाने से वे उनका इस्तेमाल नहीं कर सकते। कजरिया गाँव में लोग लंबे समय से जमीन को जोत-बो रहे हैं। हाल में वन विभाग ने गाँव के चारों ओर खंदक खोद दिए हैं ताकि लोग जंगल में घुस न पाएँ। इससे न सिर्फ लोगों का जंगल जाना रूक गया है बल्कि खेतों में बाढ़ आने का खतरा भी बन गया है। सुरमा में ग्राम प्रधान लॉकडाउन का फायदा उठाते हुए लोगों को संगठित नहीं होने दे रहा है। संगठन को भी अपनी बैठक बुलाने में दिक्कत हो रही है हालाँकि हम जानते हैं कि जबतक हम संगठित नहीं होते अधिकारियों पर दबाव नहीं डाल पाएँगे।

हिमाचल प्रदेश की दलित महिला, **दिवंगत दमा देवी** की कहानी

अनुसूचित जाति समुदाय की 52 साल की **दमा देवी,** मंडी जिले की सियारी पंचायत के टिक्करी राजस्व गांव में रहती थीं। लगभग एक साल पहले, 26 जुलाई 2019 को, दमा देवी का निधन हो गया। उनके गांव का दौरा करने वाली एक तथ्यान्वेर्षण टीम ने पाया कि इससे पहले उसी दिन, दमा देवी पानी भरने गई थीं, जब 6 वन विभाग के अधिकारियों, बिना किसी पूर्व सूचना के अपनी खाकी वर्दी पहने, आये थे, और उन्हें वन भूमि से बेदखल करने की धमकी दी। दमा देवी के परिवार के पास केवल 3 बिस्वा भूमि थी, और जीवित रहने के लिए 1-2 बीघा पड़ोसी वन भूमि पर खेती के लिए उपयोग करते थे। दमा देवी के परिवार का गांव के कुछ अन्य परिवार के साथ, जिन्होंने पास में वन भूमि पर कब्जा कर मंदिर बना रखा था, आपसी झगड़ा था-।वास्तव में, गाँव के अधिकांश परिवार अपनी आवश्यकताओं के लिए कुछ वन भूमि का उपयोग कर रहे थे।

26 जुलाई 2019 को, पूरे गाँव के सामने वन विभाग के अचानक उत्पीड़न के कारण दमा देवी को डर लगने लगा और यह कहते हुए रो पड़ीं कि उनका परिवार वन भूमि पर निर्भर था। बाद में दमा देवी बेहोश हो गई, और वन अधिकारियों गाँव से बाहर निकल गए। दमा देवी की वास्तव में मृत्यु हो गई थी। उसी शाम उनके परिवार ने अनुसूचित जाति/जनजाति अधिनियम के तहत एक एफ़.आई.आर दर्ज की और उनकी मौत की ज़िम्मेदारी 6 वन विभाग के अधिकारियों के साथ-साथ कुछ पड़ोसी परिवारों पर भी डाल दी, जो उनसे लड़ते रहे थे। उनकी एफ़.आई.आर 28 अगस्त 2019 तक थाने द्वारा दर्ज नहीं की गयी। **दमा देवी के परिवार को करीब एक साल से इंसाफ का इंतजार में है। मुकदमा मार्च 2020 के लिए तय किया गया था, हालांकि लॉकडाउन के कारण स्थगित कर दिया गया है।**

गौतोबाई की कहानी

छत्तीसगढ़ में बुजुर्ग गोंड आदिवासी एकल महिला

आदिवासी बाहुल्य वनांचल के अतिदुर्गम का ग्राम माधोपुर, तहसील मोहला, जिला राजनांदगांव छत्ती-सगढ़ राज्य में स्थित है। तथा इस गांव में कुल 41 आदिवासी गोंड जाति के परिवार निवासरत है। श्रीमती **गौतो बाई** , उम्र 62 वर्ष , गोंड आदिवासी एकल महिला है। ग्राम माधोपुर की इस महिला का घर परिवार में सबकुछ होने के बाद भी इनको मदद करने वाला न परिवार है और न ही सरकार की योजना है। बुढ़ापे में विधवा महिला को जीवन व्यापन के लिए मात्र 90 डिसमिल जमींन दिए है, जो असिंचित है ,जिससे बरसात के मौसम पर निर्भर है। यह महिला हर वर्ष गांव के लोगो को आधा हिस्सा उत्पन्न का लेने हेतु अधिया खेती देती है जो आजीविका के लिए पर्याप्त नही है ।

ऊपर: गौतो बाई

इस महिला की बुरी दयनीय स्थिति लॉक डाउन के दौरान हुई जो इस प्रकार है - सन 2019 में मात्र ग्राम पंचायत द्वारा दो माह का निराश्रित पेंशन मिला है। तब से आज तक नही मिला है। इसे पेन्सन मिलती है यह शासन का मानना है तथा इसको केवल महीने में 5 किलो चावल दिया जाता है । इसका आधार कार्ड , निर्वाचन कार्ड बना हुआ है । लॉक डाउन के दौरान इसे तीन माह तक मार्च अप्रैल मई तक का प्रतिमाह राशन नही मिलने के कारण इसे भूख प्यासा सोने को मजबूर हुई थी । गांव के पड़ोसियों ने इस दौरान अपने घरों में खाना खिलाकर मदद किये । क्योंकि घर में राशन नही , लॉक डाउन में सब काम धंधे बंद होने के कारण ईंधन के जलाऊ लकड़ी जंगल से नही पाई। प्रधान मंत्री उज्जवला योजना का गैस सिलेंडर का लाभ भी इस महिला को नही मिल रहा है ।
गांव में स्थानीय प्रशासन लोगो को घर से बहार नही निकलने दे रहे थे।

यह महिला हमेशा जंगल जाकर वन उपज संकलन करके बेचती है और जरुरत की सामग्री खरीदकर लाती हैं। लेकिन दुकान और बाजार बंद तथा घर के बाहर नहीं निकलने देना । इसके लिए तीनों समस्या दर दर की ठोकर खाने मजबूर कर दिया था । गौतोबाई ने बताया कि वह वन उपज संकलन करने के अलावा जंगली सब्जी,और कन्द मूल का उपयोग भोजन के लिए करती थी । जो लॉक डाउन के वजह से नही ले सकी ।

बँधुआ मजदूरी और **लिंग आधारित हिंसा:** बंगलुरु में काम करनेवाली झारखंड की **आदिवासी प्रवासी महिला** मजदूरों के बारे में रिपोर्ट

दो आदिवासी महिला प्रवासी मजदूर जो बीस साल की माताएँ हैं, बँधुआ मजदूरी से भागने में सफल रहीं। ठेकेदार ने उन्हें 7 महीने के काम के लिए मात्र 1200 रुपए अदा किए। उनमें से एक को तो बला-त्कार तक झेलना पड़ा था।

झारखंड की आदिवासी महिला नेटवर्क की एलीना होरो ने *द वायर* में छपे अपने लेख में बताया कि "राष्ट्रव्यापी लॉकडाउन के कारण हम यह पता करने में असमर्थ हैं कि देश के अलग-अलग हिस्सों में कितनी और आदिवासी औरतें ऐसी स्थिति में फँसी हैं। **राज्य से आदिवासी औरतों और लड़कियों की मानव तस्करी कोई नई बात नहीं है लेकिन इस तरह की डरावनी घटनाओं से सरकार और उसकी एजेंसियों पर दबाव बनना चाहिए कि वे आदिवासी औरतों के ऐसे रोज-मर्रा के शोषण के खिलाफ तुरंत कार्रवाई करें और औरतों को कार्यस्थल पर सुरक्षा उपलब्ध कराएँ और श्रम कानूनों को सख्ती से लागू करें**। झारखंड की राज्य सरकार को सक्रिय रूप से सभी प्रवासी मजदूरों का कल्याण बोर्ड में विस्तृत रिकॉर्ड रखना चाहिए और सुनिश्चित करना चाहिए कि उन्हें समुचित सामाजिक सुरक्षा मिले।" उनका यह भी कहना था कि प्रवासी महिला मजदूरों के लिए विशेष प्रावधान किए जाने चाहिए।

औरतों के नेतृत्व में चलनेवाली **ओडिशा की वन संरक्षण कमिटी** की **जन्हा प्रधान** की दास्तान

मेरा नाम **जन्हा प्रधान** है। मैं कोंढ आदिवासी हूँ और नयागढ़ जिला के रणपुर ब्लॉक के गुंडुरीबादी गाँव में औरतों के नेतृत्व में चलनेवाली वन संरक्षण कमिटी या थेंगापल्ली की सदस्या हूँ। हमारे गाँव में कुल 22 घर हैं और थेंगापल्ली रिवाजों का इस्तेमाल करते हुए पिछले 40 सालों से अपने जंगलों की संरक्षा कर रहे हैं। हर दिन चार औरतें जंगल की देखभाल के लिए गश्त पर निकलती हैं। रात में यही काम नौजवान बच्चे करते हैं।

हम आदिवासी हैं। जंगल हमारी जिंदगी है। हम जंगल के बिना नहीं रह सकते। हम जंगल से टुंगा, कोरबा जमा करते हैं। हमें बाजार से बैंगन और आलू-जैसी साग-सब्जी खरीदनी होती है। पहले हमारी सास जंगल की देखभाल करती थी, जब वे बूढ़ी हो गईं यह जिम्मेदारी हमारे ऊपर आ पड़ी। हमारे बच्चे भविष्य में जंगल की गश्त लगाते रहेंगे। जंगल हमें सब कुछ देता है – खाना, फल, औषधि, बाँस, लकड़ी। जब हमें चोट लगती है, हम जड़ी-बूटी जमा करते हैं और उसे पीसकर लेप बनाते हैं और अपने जख्म का उपचार करते हैं।

ऊपर: जन्हा प्रधान

कोविड-19 के लॉकडाउन के दौरान जब हम कुछ कमा नहीं पाते थे क्योंकि अपने लघु वनोपजों को बेच नहीं पाते थे उस समय हमें जंगल से ही खाना, औषधि और पोषण मिलता था। **भले ही जंगल अधिकार का हमारा दावा अब भी लंबित हो, हम जानते हैं कि जंगल हमें सुरक्षा का भाव देता है, इसलिए हम अपना जंगल किसी को नहीं देंगे। हम दिन-रात उनकी देखभाल करेंगे।**

जहाँ सामुदायिक वन अधिकारों को कानूनी मान्यता मिली हुई है वहाँ **महिलाओं की सामाजिक समता** महाराष्ट्र के दास्तान

मीडिया में छपे ये दो दास्तान हमें वनाधिकारों को कानूनी मान्यता और ग्राम सभाओं और वन प्रबंधन में औरतों की सक्रिय भूमिका के असर के बारे में बताते हैं।

- हाउ फारेस्ट राइट्स मेड थिस महाराष्ट्र विलेज आत्मनिर्भर
- आउट ऑफ़ थे वुड्स

अगला पृष्ठ: कंधमाल में वन विभाग द्वारा तबाह कुदरती जंगल

कोविड और वनाधिकार के बारे में **मीडिया आलेख** (1-15 जून 2020)

- कोरोना संक्रमण दौर में अर्थव्यवस्था का सीधा असर वनोपज पर निर्भर महिलाओं पर, वनधन योजना स्थिति सुधारने में नाकाम
- लॉकडाउन के दौरान 85 फ़ीसदी मज़दूरों ने घर जाने का किराया ख़ुद दिया: रिपोर्ट
- रायपुर : छत्तीसगढ़ में 'पेसा' कानून को जमीन पर उतारने की पहल शुरू, आदिवासी समाज तथा पंचाय-तीराज सशक्तिकरण व वनाधिकार हेतु
- कोयला खदानों में शत प्रतिशत एफडीआइ शुरू
- केंद्र और राज्यों के बीच तालमेल की कमी के चलते खड़ा हुआ प्रवासी संकट: मेधा पाटकर
- असम में तेल की आग पर मीडिया चुप,सरकार अंसवेदनशील: 10 तस्वीरें
- आदिवसियो को सही दाम नही था पता
- आदिवासी महिलाओं के विरोध पर उल्टे पांव लौटे हिमाचल के मंत्री, ये है वजह
- जमीन के स्वामित्व को लेकर वन विभाग और आदिवासी आमने-सामने
- सुनो सरकार! वन अधिकार मान्यता कानून में वन विभाग को 'नोडल एजेंसी' नहीं बनाया जा सकता
- वीरान पहाड़ियों को हराभरा बनाने कैंपा वन प्रोजे-क्ट से लगेंगे पौधे
- वन विभाग अमले ने टपरी जलाई, जागृत आदिवासी दलित संगठन ने बताया गलत

- लाइव: गोवेर्मेंट स्टॉप्स साल सीड प्रोक्योरमेंट विथ एम् इस पी डिस्ट्रेस सेल लेक्लि

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें:
vanadhikarmedia@gmail.com